आत्मिक विकास को प्रोत्साहित करना

(1:15, 16)

1960 के दशक में, साइमन और गरफुनकेल ने शज़्दों और सुरों को रिकॉर्ड किया जिससे एक पीढ़ी आकर्षित हुई। उनके गीतों में ''साउंड्स ऑफ़ साइलेंस,'' ''ब्रिज ओवर ट्रबल्ड वाटर,'' और अन्य गीत शामिल थे। एक गीत तो व्यज़्तिवाद के लिए राष्ट्रगीत की तरह प्रसिद्ध हो गया। पॉल साइमन ने इन गीतों को लिखा था:

> आई एम ए रॉक, आई एम एन आइलैंड।
> एण्ड ए रॉक फील्स नो पेन,
> एण्ड एन आइलैंड नैवर क्राइस।

जिसका भावार्थ है, ''मैं एक चट्टान हूं, मैं एक टापू हूं। और चट्टान को दर्द नहीं होता, और टापू कभी चिल्लाता नहीं।'' उसके शज़्दों में समयों की आत्मा की स्वतन्त्रता को दिखाया गया। उसने हृष्ट-पुष्ट लोगों को हमारे नायक बना दिया। यह ज़्लिंट ईस्टवुड, चार्ल्स ब्रौन्सन, स्टीवन सिगल और सिलवेस्टर स्टेलन की फिल्मों से स्पष्ट है। सब कुछ अकेले करने वाले एक व्यज़्ति का विषय बहुत से लोगों को आकर्षित करता है।

''मैं'' कहने वाली पीढ़ी आ गई है। आज हमारे पसन्दीदा शज़्द ''हम,'' ''हमारा,'' ''हमें'' के बजाय ''मैं,'' ''मेरा'' और ''मुझे'' हैं।

कलीसिया अपने आप को इन सब के बीच में पाती है। जो लोग मण्डलियों में इकट्ठे होते हैं वे ''मैं'' वाली पीढ़ी की शिक्षा से प्रज़ावित हैं, जैसा कि प्रमाण से पता चलता है:

> यह कहना सही है कि आज प्रार्थना भवन में आने वाले अधिकतर लोग सामूहिक अर्थ में सोचने को तैयार नहीं हैं। हमने सीखा है कि निर्भरता का अर्थ निर्बलता; जवाबदेही का मतलब गुलामी है; अधीनता का अर्थ छोटे होना है। समूह को ऊपर उठाने के लिए अपने आप का इन्कार करने की धारणा ही आधुनिक दिमाग के लिए बाहरी है। ...

> ... कलीसिया के अधिकतर सदस्य रविवार को आराधना में जाने वाले कपड़े पहनने वाले व्यक्तिवादी हैं। वे "मैं" के हिसाब से ही सोचते हैं। वे ऐसे निर्णय लेते हैं जो समूह की भलाई को नहीं, बल्कि व्यक्तिगत प्राथमिकताओं तथा मूल्यों को ध्यान में रखकर लिए जाते हैं। अति आधुनिक मसीहियों के मन में, अधिकतर लोगों की आवश्यकता कुछ लोगों या केवल एक की आवश्यकता को दबा दिया या पीछे रख दिया जाता है।[1]

"मैं" कहने वाली पीढ़ी होने वाले संसार के इतिहास में हम पहली पीढ़ी नहीं हैं। पौलुस मसीही लोगों को बार-बार एक दूसरे की चिंता करना याद दिलाता था। उसकी पत्रियों में एक-दूसरे से प्रेम रखने, एक दूसरे के प्रति दयालु होने और एक-दूसरे को प्रोत्साहन देने की कई बातें हैं। पौलुस ने फिलिप्पी, कुरिन्थुस, इफिसुस, रोम और थिस्सलुनीके जैसे प्राचीन जगत के महानगरों में काम किया। उसने मुज़्यत: शहरी मसीहियों के साथ काम किया जो ऐसे सांस्कृतिक माहौल में रहते थे जिससे अपने बीच में टापू बना लिए थे।

हमारी तरह, पहली सदी के मसीही लोगों को इकट्ठे होने के महत्व के बारे में बहुत कुछ सीखना था। उनके लिए संगति, एक दूसरे की देखभाल और अपने से पहले पूरे समूह की आवश्यकताओं को रखने की बात सीखना आवश्यक है। हमारी तरह पहली सदी के बहुत से मसीही लोगों को यह ज्ञान नहीं था कि समाज में और भाइयों के साथ एक दूसरे के साथ सज़्बन्ध बनाए रखकर कैसे रहना है।

पौलुस शहरी मसीहियों को लिख रहा था। वे संसार के मैट्रोपोलिटन केन्द्रों अर्थात महा नगरों में रहते थे। उन्हें मसीह की देह के रूप में रहना सीखना आवश्यक था।

उदाहरण के लिए, रोम के मसीही लोगों को भाईचारे के प्रेम में एक दूसरे के प्रति समर्पित होना सीखना आवश्यक था (रोमियों 12:10)। पौलुस ने उन्हें अपने से बढ़कर एक दूसरे का सज़्मान करना (रोमियों 12:10), एक दूसरे के साथ मिलजुलकर रहने (रोमियों 12:16), एक दूसरे का न्याय न करने (रोमियों 14:13) और एक-दूसरे को ग्रहण करने (रोमियों 15:7) के लिए कहा। उसने उन्हें "उन बातों का प्रयत्न" करने के लिए कहा "जिनसे मेल मिलाप और एक दूसरे का सुधार हो" (रोमियों 14:19)।

कुरिन्थुस के व्यापारिक क्षेत्र के मसीही लोगों को संगति में भोजन करने के लिए इकट्ठे होने पर एक दूसरे की प्रतीक्षा करना सीखना आवश्यक था (1 कुरिन्थियों 11:33)। पौलुस ने उन्हें सिखाया कि वे पक्षपात से फूट न डालें बल्कि एक दूसरे की बराबर चिंता करें (1 कुरिन्थियों 12:25)।

पौलुस ने थिस्सलुनीके में, जो एक और महानगर था, मसीही लोगों को एक दूसरे से प्रेम रखने के लिए प्रोत्साहित किया (1 थिस्सलुनीकियों 4:9)। उसने उन्हें एक दूसरे को सांत्वना देने (1 थिस्सलुनीकियों 4:18) और एक दूसरे को ऊपर उठाने का निर्देश दिया (1 थिस्सलुनीकियों 5:11)। उसने कहा, "... सदा भलाई करने को तत्पर रहो आपस में और सब से भी भलाई ही की चेष्टा करो" (1 थिस्सलुनीकियों 5:15)।

पौलुस ने इफिसुस के मसीही लोगों को एक दूसरे के साथ धीरज रखने, एक दूसरे के प्रति दया, कृपा करने और करुणामय होने तथा क्षमा करने वाले बनने के लिए कहा (4:2, 32)। उसने उन्हें एक दूसरे के अधीन होने की सलाह दी (5:21)।

परमेश्वर के लोगों के एक नए समाज के रूप में रहना सीखने की इस बात पर जो कुछ पौलुस ने कहा, वह बिल्कुल आज की कलीसिया के सुनने के लिए भी है। साथी मसीहियों के साथ अपने निजी व्यवहार में पौलुस द्वारा दिया गया उदाहरण मानने की आवश्यकता है। यह हमें अपनी छोटी सी दुनिया से निकलकर दूसरे के जीवन में भाग लेने में सहायक हो सकता है।

एक क्षण के लिए पौलुस के उदाहरण पर विचार करें। 60 ई. की बात है, वह इफिसुस के उन मसीही लोगों से जिन्हें वह जानता था, मीलों दूर नज़रबंद था। कलीसिया को सिखाने, सेवा करने और तैयार करने के लिए इफिसुस में किसी समय कभी तीन वर्ष तक रहा था। परन्तु चार सालों से उसने उस नगर को देखा नहीं था।

कारावास, कठिनाइयां, दूरी और समय का बीतना, इनमें से कोई भी इफिसुस में रहने वाले अपने भाइयों के प्रति पौलुस की चिंता को कम न कर पाया। उसने दूसरों के जीवन की बातों को निकालकर अपनी समस्याओं पर केन्द्रित होने की परिस्थितियों को अपने ऊपर हावी होने की अनुमति नहीं दी।

इफिसुस का एक मसीही एक दिन उसके मार्ग में आया। उसने पौलुस को रोम में पाया। उससे मिलकर पौलुस वहां की कलीसिया के बारे में पूछने से नहीं रह सका। लोग कैसे थे? उनमें ज़्या हो रहा था? ज़्या वे परमेश्वर के लोगों के रूप में इकट्ठे हो रहे थे?

उनकी खबर पाकर पौलुस का दिन महक उठा। उसका मन उड़ने लगा। हम पढ़ते हैं, ''इस कारण, मैं भी उस विश्वास का समाचार सुनकर जो तुम लोगों में प्रभु यीशु पर है और सब पवित्र लोगों पर प्रगट है। तुज़्हारे लिए धन्यवाद करना नहीं छोड़ता और अपनी प्रार्थनाओं में तुज़्हें स्मरण किया करता हूं'' (1:15, 16)।

आपको तस्वीर दिखाई देती है? पौलुस इफिसुस के भाइयों से मीलों दूर जेल में बंद था। उसने चार वर्ष के लज़्बे अरसे से उनका मुंह नहीं देखा था, फिर भी उनके लिए उसके मन में बहुत प्रेम था। पौलुस हमें यह सबक सीखने में सहायता देगा: *मसीही लोग जब एक दूसरे की आत्मिक भलाई में दिलचस्पी लेते हैं तो वे परमेश्वर को प्रसन्न करते हैं।*

यीशु अपने लोगों को टापू नहीं बनाना चाहता है। वह चाहता है कि हम ऐसा समूह बनें जो एक दूसरे की सेवा करता हो। पौलुस ने हमें दिखाया कि दूसरों के आत्मिक विकास की इच्छा करने और उनमें दिलचस्पी या उनकी चिंता करने की आवश्यकता ज़्यों होनी चाहिए।

पौलुस ने दूसरों के आत्मिक विकास की सराहना की

इफिसुस के मसीही लोगों की बातें सुनकर पौलुस रोमांचित हो गया था। वे उस नाजुक संतुलन तक पहुंच गए थे जो परमेश्वर के लोगों में होना आवश्यक है। पहले, *उन्होंने प्रभु*

यीशु के प्रति वफ़ादारी दिखाई। पौलुस ने लिखा, ''मैं भी उस विश्वास का समाचार सुनकर जो तुम लोगों में प्रभु यीशु पर है ...'' (1:15)। वे अपना भरोसा यीशु पर रखने, अपने जीवन जीने और अपनी आशा बनाने के लिए आए थे। वे उसके पास न केवल उद्धारकर्ता के रूप में जो ''यीशु'' नाम का अर्थ है, बल्कि उसे प्रभु मानकर भी उसके पास आए थे। वे अपने जीवन उसे सौंपकर, उसकी आज्ञा मानकर उसे प्रसन्न करना चाहते थे। उनके जीवन के निर्णय उसे महिमा देने के लिए थे।

कुछ वर्ष पूर्व, हमारी स्थानीय मण्डली में, एक बुज़ुर्ग आदमी ने यीशु की आज्ञा मानी। उसके बाल सफ़ेद थे परन्तु उसके मन में प्रभु पर एक छोटे बच्चे जैसा भरोसा था। उस आदमी के लिए जैसे किसी व्यक्ति के साथ पानी में खड़े होकर यह विचार सुनना कि बपतिस्मे के समय, पुराना जीवन खत्म हो गया और नया शुरू हो गया है, सबसे बड़ी बात है।

आपको मालूम है कि इससे भी उत्तेजनापूर्ण बात क्या है? यह बात यीशु का परमेश्वर की संतान को परिवर्तित करना है। पौलुस ने हमें याद दिलाया कि हमें दूसरों के जीवन में प्रभु के प्रति वफादारी को बढ़ते देखकर इसकी प्रशंसा करते रहना चाहिए। अपनी छोटी सी दुनिया में रहकर हम ऐसा नहीं कर पाएंगे।

इफिसुस के लोग न केवल यीशु के विश्वासी थे, *बल्कि उनका प्रेम सब भाइयों के लिए भी था।* पौलुस ने आगे कहा, ''... तुम्हारा प्रेम जो सब पवित्र लोगों पर प्रगट है'' (1:15)। प्रेम टापू बनने या चट्टान बनने अर्थात दूसरों की देखभाल से अलग होने के विपरीत है। हम पढ़ते हैं, ''हमने प्रेम इसी से जाना, कि उसने हमारे लिए अपने प्राण दे दिए; और हमें भी भाइयों के लिए प्राण देना चाहिए'' (1 यूहन्ना 3:16)।

मसीही लोगों को यह सीखते हुए कि ऐसा प्रेम कैसे व्यक्त करना है, आनन्द से भरे होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि वे आत्मिक उन्नति कर रहे हैं। वे यीशु जैसे बन रहे हैं। उसकी समानता अपने आप को दिखा रही है। वह उनमें रह रहा है।

यह प्रेम *सब* पवित्र लोगों के लिए है। यह पक्षपात को भूलकर लोगों से उसके लिए, जो वे हमारे लिए करते हैं, प्रेम करना या केवल उन लोगों की संगति करना है जिनकी पसन्द हमारी पसन्द जैसी है। हमें चाहिए कि जब भी कोई भाई या बहन *सब* पवित्र लोगों के प्रति प्रेम दिखाए तो परमेश्वर का धन्यवाद करें।

पौलुस ने दूसरों के आत्मिक विकास के लिए प्रार्थना की

इफिसुस के लोगों के विश्वास और प्रेम की बात सुनने के बाद, पौलुस ने लिखा, ''[मैं] तुम्हारे लिए धन्यवाद करना नहीं छोड़ता, और अपनी प्रार्थनाओं में तुम्हें स्मरण किया करता हूं'' (1:16)। पौलुस को दो महत्वपूर्ण सच्चाइयों की समझ थी। पहली, वह आत्मिक विकास और एक दूसरे के लिए प्रार्थना करने वाले मसीही लोगों के सम्बन्ध को जानता है। दूसरी, उसे एक दूसरे के लिए निरन्तर प्रार्थना करने की आवश्यकता की समझ थी।

बाद में इसी पत्र में पौलुस ने इन भाइयों को उस आत्मिक युद्ध का स्मरण कराया जिससे मसीही लोग लड़ रहे हैं। उसने उन्हें परमेश्वर के सारे हथियार पहन लेने की बात समझाई। एक सिपाही उपयुज़्त हथियार लिए बिना युद्ध नहीं लड़ सकता। पौलुस ने प्रार्थना पर ज़ोर देकर इस पत्र की समाप्ति की: "और हर समय, हर प्रकार से आत्मा में प्रार्थना, और बिनती करते रहो, और इसलिए जागते रहो, कि सब पवित्र लोगों के लिए लगातार बिनती किया करो" (6:18)।

पौलुस आत्मिक विकास और एक दूसरे के लिए प्रार्थना करने के सज़्बन्ध को समझता था। उसने प्राथमिकता से अपने भाइयों के लिए स्वयं प्रार्थना की। वह प्रार्थना और मसीही लोगों की आत्मिक भलाई के सज़्बन्ध को अच्छी तरह जानता था।

जिन गेट्ज़ ने भाइयों में प्रार्थना के इस विषय को इस प्रकार सज़्बोधित किया:

> शैतान की नीति का एक भाग हमें दूसरी बातों से व्यस्त करना है–वे बातें अच्छी भी हो सकती हैं–ताकि हम प्रार्थना को इसका उचित स्थान न दे सकें। यह एक स्वाभाविक प्रवृज़ि है, विशेषतया जब सब कुछ ठीक ठाक चल रहा हो। परन्तु पवित्र शास्त्र दिखाता है कि परमेश्वर की प्राथमिकता की सूची में प्रार्थना सबसे ऊपर है। और जब प्रार्थना की उपेक्षा की जाती है या उसे छोड़ दिया जाता है तो शैतान कलीसिया को, विशेष करके इसकी एकता को भंग करके हानि पहुंचाने का प्रयास करेगा।[2]

आइए, इन सब बातों को जीवन के लिए तीन शिक्षाओं में इकट्ठा कर देते हैं। (1) *हम में से कोई भी एक दूसरे के लिए निरन्तर प्रार्थना को बढ़ाए बिना आत्मिक स्थिरता तक नहीं पहुंच सकता।* दूसरों के लिए प्रार्थना करना आत्मिक परिपज़्वता के बढ़ने और संकेत दोनों के लिए है। (2) *कलीसिया का परिवार जब तक एक दूसरे के लिए अपनी प्रार्थनाओं में बढ़ता नहीं, तब तक शज़्तिशाली नहीं हो सकता।* हमें इस पर काम करना चाहिए। हमें अपनी सभाओं में एक दूसरे के लिए प्रार्थना करनी चाहिए और लोगों को एक दूसरे के लिए प्रार्थना करने पर ज़ोर देना चाहिए। (3) *एक दूसरे के लिए प्रार्थनाएं कभी सुसंगत नहीं होतीं जब तक लोग प्रार्थना को प्राथमिकता नहीं बनाते।*

सारांश

विज़्टर फ्रेंज़्ल को द्वितीय विश्वयुद्ध में एक नज़रबंदी शिविर में बंदी बनाया गया था। उसे गिरज़्तार करने वालों ने उसकी किताबें, उसका सामान और उसका परिवार सब पकड़ लिया। उसके पास जीने के दृढ़ इरादे के अलावा और कुछ नहीं बचा था।

उस शिविर में कई लोग निराश होकर मर गए थे। कई फ्रेंज़्ल के पास लोगों को उनकी कठिनाइयों में दृढ़ रहने में सहायता के लिए प्रोत्साहन की बात सुनने आए। अन्ततः फ्रेंज़्ल ने ऐसा ही किया। उसने लोगों को डटे रहने के लिए कहा। उसने उन्हें याद दिलाया कि अगले दिन जब उन्हें सूप मिलेगा तो कटोरे में नीचे एक मटर मिल सकता है। यह धुंधली

सी आशा थी, तो भी उसके पास उन्हें देने के लिए यही कुछ था।

पता है ज़्या हुआ ? उन भाषणों से सबसे अधिक प्रोत्साहन फ्रेंज़्ल को ही मिला। जो कुछ उसने दूसरों को दिया वह वास्तव में अपने आप को दिया था।

मसीह में जो कुछ हम एक दूसरे को देते हैं, वह अपने आप को ही देते हैं। किसी को प्रोत्साहन दें तो आप स्वयं प्रोत्साहित होंगे। किसी की सहायता करने से आपकी ही सहायता हो जाएगी। किसी का बोझ उठाएं, आपको अपना बोझ हल्का लगेगा। दूसरे मसीही के आत्मिक विकास के लिए प्रार्थना करें और आप अपने आप को आत्मिक रूप में धनी पाएंगे।

टिप्पणियां

[1]जेज़्स हिंकल एण्ड टिम वुडरूफ, अमंग फ्रेंड्सः यू कैन हैल्प मेक योअर चर्च ए वार्मर प्लेस (कोलारडो स्प्रिंग्स, कोलो.: नवप्रेस, 1989), 82–83. [2]जिन ए. गेट्ज़, *प्रेयिंग फ़ॉर वन अनदर* (व्हीटन, इलिनोइसः विज़्टर बुज़्स, 1981), 15.